eISSN:2581-4885
DEV SANSKRITI
VISHWAVIDYALAYA
PUBLICATION

PERSPECTIVE ARTICLE

रामचरितमानस में वर्णित यज्ञ की वर्तमान में प्रासंगिकता

धर्मेंद्र सिंह [1], मनीषा भारद्वाज [2]

[1] असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार, उत्तराखंड,
[2] असिस्टेंट टीचर, श्री बालभारती प्रसाद शुक्ला पब्लिक स्कूल, चिनहट, लखनऊ

*CORRESPONDENCE
Address Dharmendra Singh, Department of Hindi, Dev Sanskriti Vishwavidyalaya, Shantikunj, Haridwar, Uttarakhand, India-249411.
Phone +91 9451132352
Email dharmendra.singh@dsvv.ac.in

PUBLISHED BY
Dev Sanskriti Vishwavidyalaya Gayatrikunj-Shantikunj Haridwar, India

OPEN ACCESS
Copyright (c) 2022 SINGH and BHARDWAJ
Licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License

सारांश: प्रस्तुत शोध का उद्देश्य रामचरितमानस में वर्णित यज्ञ की वर्तमान समय में प्रासंगिकता का अध्ययन करना है। यज्ञ की महत्ता प्राचीन काल से चली आ रही है। यज्ञ की महिमा का गान ऋग्वेद से लेकर पुराण और बहुत से धर्म ग्रंथों ने किया है। रामचरितमानस यज्ञीय संस्कृति की रक्षा और संवर्धन का एक सतत् प्रयास करती है। श्रीराम का जन्म यज्ञीय वातावरण में होता है। यज्ञ की रक्षार्थ ही वे अयोध्या छोड़कर निकलते हैं और विवाह भी धनुष यज्ञ द्वारा होता है। सारे जीवन वे ऋषियों की रक्षा करते हुए यज्ञीय जीवन बिताते हैं। स्वयं भी अंत में अश्वमेध यज्ञ करते हैं। रामकथा यज्ञमय ही है। आज के दूषित वातावरण को परिष्कृत करने हेतु यज्ञ उतना ही प्रासंगिक है जितना रामचरितमानस काल में था।

कूट शब्द: रामचरितमानस, यज्ञ

प्रस्तावना

इस भौतिक युग में अनेक सुविधाएँ तथा साधन होते हुए भी मानव जीवन में अनेक कठिनाइयाँ और परेशानियाँ उपस्थित हैं। मनुष्य चिंता, भय, आपत्ति तथा अभाव से पीड़ित और दुखी है। मनुष्य के दुःख के पीछे अनेक प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष कारण हैं। प्रत्यक्ष कारणों को दूर करने के प्रयास विभिन्न संस्थाओं और सरकारों द्वारा किए जा रहे हैं, परन्तु अप्रत्यक्ष कारणों का निराकरण तो दूर, उनकी खोज भी नहीं की जा रही। इन अप्रत्यक्ष कारणों में सबसे महत्वपूर्ण है मानवीय आचार और विचार में आई विकृति, जो मानव जीवन में, परिवार में और समाज में विष की तरह घुल गई है। रामचरितमानस सभी धर्मग्रंथों और स्मृतियों का सार है। व्यक्ति और समाज के उत्कृष्ट स्वरुप को अक्षुण्ण रखने एवं विकसित करने के लिए क्या करना चाहिए, इसका एक विशिष्ट उदाहरण रामचरितमानस के माध्यम से सीखा जा सकता है क्योंकि इसमें जीवन को खुशहाल और समृद्ध बनाने की आचारसंहिता प्रस्तुत की गई है।

प्राचीन ग्रंथों में यज्ञ वर्णन

यज्ञ हमारी प्राचीनतम संस्कृति है। यज्ञ से वर्तमान में उपजी अनंत गंभीर समस्याओं का समाधान किया जा सकता है। वेदों में यज्ञ की महिमा कुछ इस प्रकार बताई गई है– "यज्ञ के प्रकाश के लिए वेदों का आविर्भाव हुआ है।" शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है कि– "यज्ञ साक्षात् परमात्मा है" [1] । ऋग्वेद में भी यज्ञ की महिमा का वर्णन है जो जीवन को संजीवनी प्रदान करता है।

प्राचंयज्ञंप्रणवयासस्वाय।
(ऋग्वेद १०/१०/१२) [2]

यज्ञ की वैज्ञानिक प्रक्रिया द्वारा मनुष्य का भौतिक व अध्यात्मिक उत्कर्ष होता है। गीता में भी यज्ञ की महिमा का वर्णन करते हुए कहा गया है कि यज्ञ से भगवान प्रसन्न होते हैं।

सहयज्ञा प्रजाःस्रष्ट्वा पुरोवाचप्रजापतिः।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोस्त्वष्टकामधुक्।
देवानभावयतानेनतेदेवाभावयन्तुवः।
परस्परभावयंतःश्रेयपरमावाप्स्यथ।।
इष्टान्भोगान्हिवोदेवादास्यन्तेयज्ञभाविताः। (भगवद्गीता ३/१०/११) [3]

सृष्टि के प्रादुर्भाव काल में जब पहले–पहले मनुष्य इस धरती पर अवतीर्ण हुआ तो यहाँ उसे बड़े अभाव, अशांति और कष्ट दिखाई दिए। मनुष्य अपने पितामह ब्रह्माजी के पास गये और सारी व्यथा कह सुनाई। ब्रह्माजी कुछ देर तक विचार करते रहे, इसके बाद उन्होंने मनुष्य से कहा– जाओ यज्ञ करो, आहुतियों से संतुष्ट हुए देवता तुम्हारी कामनाएँ पूर्ण करेंगे, शक्ति प्रदान करेंगे जिससे तुम्हारा जीवन सभी प्रकार से सुखी होगा।

इसके बाद ब्रह्माजी ने 'यजुर्वेद' का निर्माण किया। जिस प्रकार ऋग्वेद के मन्त्रों में विश्व–दर्शन सूक्ष्मातिसूक्ष्म ज्ञान, तथा तात्विक मीमांसाएँ भरी हुई हैं उसी प्रकार यजुर्वेद में यज्ञों से कामनाओं की पूर्ति होने का विशद विज्ञान भरा पड़ा है। यज्ञ की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए शास्त्रकार ने उसे भारतीय संस्कृति का पिता कहा है और उसके द्वारा मनुष्य की सम्पूर्ण कामनाओं की पूर्ति होने की बात को प्रमाणित किया है। यही कारण था कि किसी जमाने में घर–घर अग्निहोत्र हुआ करता था। यज्ञ किए बिना लोग आहार नहीं ग्रहण करते थे, यज्ञ के बिना कोई मंगल कार्य नहीं पूरा होता था। दुष्ट प्रवृत्ति के लोग भी यज्ञ के तांत्रिक विधानों से अपना मनोरथ सफल किया करते थे। इससे पता चलता है कि यज्ञ विधा के शोध परक होने के साक्ष्य प्राचीन काल से ही स्पष्ट देखने को मिलते हैं

रामचरितमानस में वर्णित यज्ञीय महिमा

हमारा ऐसा कोई ग्रंथ नहीं जिसमें यज्ञ के महत्व पर प्रकाश न डाला गया हो। भारतीय संस्कृति में एक नये अध्याय के प्रणेता महाकवि तुलसीदास जी की दृष्टि से भी वह महत्व छुप नहीं सका। रामचरितमानस में अनेक प्रसंग ऐसे हैं जिनमें यज्ञ की महान महत्ता पर प्रकाश डाला गया है।

इस कथा में यज्ञ का वर्णन उस प्रसंग से किया जाता है जब हर शुभ कार्य में यज्ञ किया जाता था। जब दक्ष प्रजापति बनते हैं तो यज्ञ का आयोजन करते हैं।

दच्छ लिए मुनि बोलि तब, करन लगे बड़ जाग।
नेवते सादर सकल सुर, जे पावत मख भाग।।
(बालकाण्ड, 60) [4]

सभी ऋषि–मुनि तथा ब्राह्मण यज्ञीय भावना को जन जीवन में सबल बनाए रखते थे। इससे देव वृत्तियाँ पुष्ट रहती थीं तथा समाज में सुख–शांति का वातावरण रहता था। असुरों को श्रेष्ठ प्रवृत्तियाँ सहन नहीं होतीं। अस्तु, रावण का संरक्षण पाकर उन्होंने श्रेष्ठ प्रवृत्तियाँ नष्ट करने के लिए उनके मूल यज्ञीय परंपरा को नष्ट करना प्रारंभ किया। उसके लिए उन्होंने विधिवत अभियान छेड़ दिया। रावण ने असुरों से कहा –

द्विज भोजन मख होम सराधा।
सबकै जाई करहु तुम बाधा।।
(लंकाकाण्ड 180/4/6/8) [4]

राक्षस यज्ञों में विघ्न पैदा करने लगे और यज्ञकर्ताओं को सताने लगे। फलस्वरूप भय फैल गया।

जहँ जप जग्य योग मुनि करहीं।

अति मरीचि सुबाहुहिं डरहीं।।
देखत जग्य निशाचर धावहीं।
करहिं उपद्रव मुनि दुःख पावहिं।।
(बालकाण्ड 205/2/3/4) [4]

इन उपद्रवों के कारण यह स्थिति हो गई कि श्रेष्ठ प्रेरणा देने वाले यज्ञादि कर्म लुप्त होने लगे।

नहिं हरि भगति जग्य तप ग्याना।
सपनेहुँ सुनियन बेद पुराना।।
(बालकाण्ड) [4]

इस अनीति को मिटने के लिए भगवान का अवतार आवश्यक हो गया। इसके लिए वातावरण बनाने के लिए वशिष्ठ जी ने श्रृंगी ऋषि को बुलाकर पुत्र कामेष्टि यज्ञ कराया। भगवान राम का जन्म यज्ञ के फलस्वरूप हुआ था। वे अपने अवतार का श्रेय यज्ञ भगवान को ही देते हैं। यज्ञ ही रामावतार का जनक है। इसका वर्णन तुलसी कृत रामायण में इस प्रकार मिलता है।

एक बार भूपति मन माहिं।
भै गलानि मोरे सुत नाहीं।।
गुरुगृह गयउ तुरत महिपाला।
चरण लागि करि विनय विसाला।।
श्रृंगी रिषिहि वशिष्ठ बुलावा।
पुत्र काम शुभ यज्ञ करावा।।
भगति सहित मुनि आहुति दीन्हें।
प्रगटे अगिनि चरु कर लीन्हें।।
यह हवि बाँटी देहु नृप जाई।
जथा जोग जेहि भाग बनाई।।
तबहि रायं प्रिय नारि बुलाईं।
कौसल्यादि तहाँ चलि आईं।।
अर्ध भाग कौसल्याहिं दीन्हा।
उभय भाग आधे कर लीन्हा।।
कैकेई कहँ नृप सो दयऊ।
रहो सो उभय भाग पुनि भयऊ।।
कौसल्या कैकई हाथ धरि।
दीन्ह सुमित्रहि मन प्रसन्न करि।।
एहि विधि गर्भ सहित सब नारी।
भई हृदय हरषित सुख भारी।।
(बालकाण्ड 188/1/2/3/4) [4]

वाल्मीकि रामायण में यही प्रसंग इस प्रकार वर्णित है। अयोध्या नरेश श्री दशरथ जी अपने यज्ञ करने वाले ब्राह्मणों से कहते हैं –

धर्मार्थं सहितं युक्तं श्लक्ष्णं वचनमब्रवीत्।
ममता तप्यमानस्य पुत्रार्थं नास्ति वैसुखम।।८।।
– वाल्मीकि रामायण, आ.ख., द्वादश सर्ग
[5]

अर्थ– हे विप्रगणों ! मैं पुत्र प्राप्ति की कामना से बहुत ही संतृप्त और व्याकुल हूँ। मुझे कहीं जरा भी सुख नहीं मिल रहा है अतः मैंने पुत्र प्राप्ति के लिए यज्ञ करने का विचार किया है।

यज्ञ द्वारा उत्पन्न हुई संतति यज्ञीय जीवन का ज्वलंत उदाहरण बनकर सामने आई। राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघन, चारों भाइयों के जीवन में यज्ञीय भावना का समावेश हर दृष्टि से दिखाई देता है।

यज्ञ में असुर सदा ही विघ्न डालते हैं। कारण यह है कि यज्ञ से दैवी तत्व बलवान होते हैं और असुरता दुर्बल होती है। असुरों को अपनी हानि और अपने विरोधी देवताओं की शक्ति का बढ़ना सहन नहीं होता इससे वे यज्ञ को नष्ट करने के लिए जो कुछ कर सकते हैं, अवश्य करते हैं। ऐसा ही कुछ विश्वामित्र जी के यज्ञ में असुर कर रहे थे। उनसे रक्षा करने हेतु विश्वामित्र जी राजा दशरथ के पास गए और राम और लक्ष्मण को यज्ञ रक्षा के लिए भेजने का आग्रह किया। उनके आग्रह करने पर राजा दशरथ द्वारा मोह त्यागकर अपने दोनों पुत्रों को उनके साथ यज्ञ की रक्षा के लिए भेजना यज्ञीय महिमा का ही पर्याय है।

प्रात कहा मुनि सन रघुराई।
निर्भय यज्ञ करहु तुम जाई।।
होम करन लागे मुनि झारी।
आपु रहे मख की रखवारी।।
सुनि मारीच निशाचर कोही।
लै सहाय धावा मुनि द्रोही।।
बिनु फिर बाण राम तेहि मारा।
शत जोजन गै सागर पारा।।
पावक सर सुबाहु पुनि जारा।
अनुज निशाचर कटकु संहारा।।

(बालकाण्ड 209/1/2/3) [4]

कैकयी द्वारा राम को वनवास भेजने का वर मांगने पर राजा दशरथ मोह वश चाहते थे कि राम अपने अधिकार का प्रयोग करके वन जाने से इंकार कर दें, किन्तु राम अपने पिता के वचन पालन को ही अपना मुख्य कर्तव्य मानते हैं।

तात तुम्हें मैं जानऊँ नीके।
करौं काह असमंजस जी के।।
राखेऊ रायं सत्य मोहि त्यागी।
तनु परिहरेउ पेमु पन लागी।।
(बालकाण्ड 263/3/5/6) [4]

जहाँ सांसारिक लोग अपने अधिकार के लिए अपने भाइयों

का भी हक हड़पने का प्रयास करते हैं वहाँ भगवान राम अपना उचित अधिकार भी अकेले स्वीकार करने में दु:ख पाते हैं। इस पवित्र भावना से लोगों के मनों के कलुष धुल जाएँ ऐसी कामना करते हुए तुलसीदास जी लिखते हैं –

प्रभु सप्रेम पछितानि सुहाई।
हरउ भगत मन कै कुटिलाई।।
(अयोध्या काण्ड) [4]

वन में जाकर एक ओर उन्होंने श्रेष्ठ यज्ञों की रक्षा की, वहाँ निकृष्ट उद्देश्य से किए जाने वाले यज्ञों का विध्वंस भी कराया, क्योंकि लोक हित की कामना से विहीन यज्ञ समाज में केवल दुखदायी परिणाम ही उत्पन्न करते हैं।

राक्षसों द्वारा यज्ञ का उपयोग

राक्षसराज रावण को यज्ञ शक्ति पर पूर्ण विश्वास था। वह पं–डित भी था, इसलिए वह भली–भांति जानता था कि यज्ञादि धर्मानुष्ठान देवगणों का पोषण हैं, इसलिए उसने अपने अनुचरों को आदेश दिया कि जहाँ कहीं भी यज्ञ होते दिखाई दें, उन्हें नष्ट करने और विघ्न डालने का प्रयत्न करो।

सुनहु सकल रजनीचर जूथा।
हमरे बैरी विबुध बरूथा।।
तेंह कर मरन एक विधि होई।
कहहुं बुझाई सुनहु अब सोई।।
द्विज भोजन मख होम सराधा।
सब कै जाइ करहु तुम बाधा।।
छुधा छीन बलहीन सुर, सहजेहिं मिलिहहिं आइ।
तब मारिहऊँ कि छाडिहऊँ, भली भांति अपनाइ।।
(बाल काण्ड 180/3/5) [4]

रावण और उसका पुत्र मेघनाद यज्ञ के सहारे शक्ति संवर्धन करना चाहते थे, जिसकी सूचना विभीषण को मिलते ही वानर सेना को भेजकर उनका यज्ञ विध्वंस करा दिया। उसी के बाद मेघनाद और रावण खुद भी युद्ध में मारा गया। इसका वर्णन तुलसीकृत रामायण में कुछ इस प्रकार है –

इहाँ दशानन जागि कर।
करै लाग कछु जग्य।।
राम विरोध विजय चहु।
शठ हठ बस अति अग्य।।
इहाँ विभीषण सब सुधि पाई।
सपदि जाइ रघुपताहिं सुनाई।
नाथ करहि रावण एक जागा।
सिद्ध भये नहिं मरहि अभागा।।
पठवहु नाथ बेगि भट बंदर।
करहि विधंस आव दशकन्धर।।
प्रात होत प्रभु सुभट पठाये।
हनुमदादि अंगद सब धाये।।
जग्य करत जब ही सो देखा।
सकल कपिन्ह भै क्रोध विशेषा।।
रण ते निकस भागि घर आवा।
इहाँ आई शठ ध्यान लगावा।।
अस कहि अंगद मारी लाता।
चितव न शठ स्वारथ मन राता।।
छन्द–नहिं चितव जब करि कोप कपि।
गहि दसन्ह लातन्ह काटहीं।।
(लंकाकाण्ड 84/1/2/3) [4]

विश्व कल्याण हेतु यज्ञ

वन से वापस लौटने के पश्चात और राज्य कार्य सँभालने के पश्चात राम को यज्ञ करने की इच्छा जाग्रत हुई, क्योंकि उनके पूर्वज भी बड़े–बड़े यज्ञ करते रहते थे। इसी कारण उन्होंने अश्वमेध यज्ञ का आयोजन किया। वह यज्ञ समस्त प्रजा के लिए और संसार के सभी प्राणियों के लिए उपयोगी था।

एतदाख्यायकाकुत्स्थो भ्रातृभ्यामतिप्रभ:।
लक्ष्मणं पुनरेवाहधर्मयुक्तभिर्दवच।।१।।
वाशिष्ठ्म वामदेवं च जावालिमथ काश्यपम।
द्विजन्श्च सर्वप्रवरानश्व्मेध पुरस्कृतान।।२।।
(वाल्मीकि रामायण उत्तरकाण्ड ९१ सर्ग) [5]

अर्थ– अमित पराक्रमी रामचंद्र अपने भ्राताओं से ऐसा कह फिर लक्ष्मण जी से धर्म पूर्वक वचन बोले।।१।। कि अश्वमेध यज्ञ कराने वाले, वशिष्ठ, वामदेव, जाबालि–कश्यप इन श्रेष्ठ ब्रा–ह्मणों को बुलाओ ।सबके आने के बाद रामचंद्र जी ने अश्वमेध यज्ञ की चर्चा की। [5]

सीताजी ने पृथ्वी की गोद ग्रहण की पर रघुनाथ जी ने और कोई विवाह न करके सोने की सीता के साथ प्रति वर्ष अनवरत यज्ञ को धर्मकार्य समझकर किया। भावनाओं और विचारों के परिवर्तन के लिए भी यज्ञ ऊर्जा का उपयोग किया जाता रहा।

निष्कर्ष

प्राचीन काल में भारत के भौतिक तथा आध्यात्मिक विज्ञान का केन्द्र बिन्दु यज्ञ ही था। यज्ञ के द्वारा मानसिक और आध्या–त्मिक त्रुटियों का निवाकरण होता है और उसके पश्चात् अनंत सिद्धियां प्राप्त होती हैं। रामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदास ने प्रारंभ से लेकर अंत तक यज्ञ की महत्ता को परिलक्षित किया है। फिर चाहे वह पुत्र की कामना से किया जाने वाला यज्ञ हो या राक्षसों से संघर्ष करने के लिए हो या फिर वातावरण परिशोधन के लिए किया गया अश्वमेध यज्ञ। यज्ञ मनुष्य की शारीरिक तथा

मानसिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। रामचरितमानस में राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न के उदाहरण से यह चित्रित किया गया है कि वे अत्यंत चरित्रवान थे। वे यज्ञ के फल से उत्पन्न हुए, यज्ञ की रक्षा करते रहे और अंत में अश्वमेध यज्ञ भी उन्होंने सम्पादित किया। परंतु विडंबना यह है कि आज हमारी यज्ञ पद्धति प्राय: लुप्त होती जा रही है और इसी कारण हम अनंत शक्ति स्रोतों का लाभ नहीं ले पा रहे हैं। यज्ञ की वर्तमान समय में उतनी ही प्रासंगिकता है जितनी कि तुलसीदास जी द्वारा रचित रामचरितमानस में वर्णित की गई है। श्रीराम जिस यज्ञीय परंपरा की रक्षा करना चाहते थे वह मात्र स्थूल अग्निहोत्र तक सीमित नहीं था, उसके साथ 'सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया' की भावना ही प्रधान थी। भारत की इस मूल यज्ञीय भावना का संरक्षण और प्रसार समाज की सुख–शांति तथा समृद्धि के लिए आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है।

निष्कर्ष

प्राचीन काल में भारत के भौतिक तथा आध्यात्मिक विज्ञान का केन्द्र बिन्दु यज्ञ ही था। यज्ञ के द्वारा मानसिक और आध्या–त्मिक त्रुटियों का निवाकरण होता है और उसके पश्चात् अनंत सिद्धियां प्राप्त होती हैं। रामचरितमानस में तुलसीदासजी ने प्रा–रंभ से लेकर अंत तक यज्ञ की महत्ता को परिलक्षित किया है। फिर चाहे वह पुत्र की कामना से किया जाने वाला यज्ञ हो या राक्षसों से संघर्ष करने के लिए हो या फिर वातावरण परिशोधन के लिए किया गया अश्वमेध यज्ञ। यज्ञ मनुष्य की शारीरिक तथा मानसिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। रामचरितमानस में राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न के उदाहरण से यह चित्रित किया गया है कि वे अत्यंत चरित्रवान थे। वे यज्ञ के फल से उत्पन्न हुए, यज्ञ की रक्षा करते रहे और अंत में अश्वमेघ यज्ञ भी उन्होंने सम्पादित किया। परंतु विडंबना यह है कि आज हमारी यज्ञ पद्धति प्राय: लुप्त होती जा रही है और इसी कारण हम अनंत शक्ति स्रोतों का लाभ नहीं ले पा रहे हैं। यज्ञ की वर्तमान समय में उतनी ही प्रासंगिकता है जितनी कि तुलसीदास जी द्वारा रचित रामचरितमानस में वर्णित की गई है। श्रीराम जिस यज्ञीय परंपरा की रक्षा करना चाहते थे वह मात्र स्थूल अग्निहोत्र तक सीमित नहीं था, उसके साथ 'सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया' की भावना ही प्रधान थी। भारत की इस मूल यज्ञीय भावना का संरक्षण और प्रसार समाज की सुख–शांति तथा समृद्धि के लिए आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है।

Compliance with ethical standards Not required.
Conflict of interest The authors declare that they have no conflict of interest.

References

[1] Sharma Pandit. Yagya Ek Samagra Up-char Prakriya. 2nd Edition, Akhand Jyoti Sansthan, Mathura: 281003. 1998.

[2] Sharma Pt.Shri Ram. Rigveda. Yug nir-man yojna Mathura. 1965. Available at https://archive.org/details/rigveda-sanhita- hindi-part-1-pt.-shri-ram-sharma-acharya/mode/2up

[3] Koushik Ashok. Shrimad Bhagwat Geeta. Chapter 3 shloka 10. Star publication Pvt. Ltd. Delhi. 1994. Pg. no. 81-82 available at https://archive.org/details/in.gov.ignca.279

[4] Poddar Hanuman Prasad. Tulsikrut Ram-charit Manas. Geetapress Gorakhpur. 1986.

[5] Valmiki. Shrimad Valmiki Ramayana. Geetapress Gorakhpur. 2017. Avail-able at https://archive.org/details/shrimad-valmiki-ramayana-hindi-edition-valmiki/mode/2up